Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 2 | Issue 4 | (Oct – Dec 2025)

संस्कृति की धरोहर के परिप्रेक्ष्य में संगीत के विविध रूप

डॉ० रेखा कुमारी
संगीत शिक्षिका – धारावती +2 उच्च विद्यालय, लखनौर, मधुबनी

सारांश

संगीत का सम्बन्ध हमारे अतीत काल से निरन्तर चला आ रहा है। प्रारम्भिक काल में ईश्वर की स्तुति और आराधना के लिए गायन किया जाता था। वर्तमान समय में संगीत ने समाज में एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। संगीत का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है और यह रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों से ही अपनी महत्ता स्थापित करता आया है। श्रीकृष्ण और गोपिकाओं की रास-लीलाएँ संगीत और नृत्य का अत्यन्त मनोहारी एवं मनोरंजक स्वरूप प्रस्तुत करती हैं। प्राचीन काल में संगीत का गायन सदैव किसी न किसी उद्देश्य को केन्द्र में रखकर किया जाता था। अजन्ता और एलोरा की गुफाओं में अंकित चित्र आज भी संगीत की ऐतिहासिक प्रासंगिकता को प्रमाणित करते हैं। अमीर खुसरो आदिकाल के एक प्रमुख रचनाकार थे। श्लोकों का गायन आज भी भारतीय परम्परा में प्रचलित है। भारतीय साहित्य अपनी समृद्ध लोक-संस्कृति और परम्पराओं के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। साहित्य के आदिकाल, भक्तिकाल तथा आधुनिक काल तीनों ही चरणों में संगीत ने समाज को गहराई से प्रभावित किया है। भारत में जाति-भेद से ऊपर उठकर संगीत को सम्मान और महत्त्व प्रदान किया गया है। साहित्य से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि होली, जैसे पर्वों में संगीत की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वर्तमान समय में भी संगीत के माध्यम से अनेक मानसिक रोगों के उपचार में सहायता ली जाती है। मीराबाई, सूरदास, कबीर और तुलसीदास जैसे संत कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से साहित्य और संगीत को समृद्ध किया। जिन ग्रन्थों ने सम्पूर्ण जन-मानस को प्रभावित किया, उनकी प्रासंगिकता भविष्य में भी बनी रही है, जिससे समाज निरन्तर गतिशील बना हुआ है।

मुख्य शब्द : संगीत, समाज, साहित्य, लौकिक, संगीत

मुख्य बिन्दु :

संगीत हमारी चेतना से गहराई से जुड़ा हुआ है। इसने मनुष्य के हृदय और मस्तिष्क दोनों पर व्यापक प्रभाव डाला है। साहित्य ने भी संगीत को समृद्ध बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संगीत ने हमारी लोक-कलाओं को सहज रूप में संरक्षित करते हुए उन्हें समृद्ध किया है। सांस्कृतिक धरोहर के रूप में संगीत आज भी उतना ही प्रासंगिक है। महाभारत, जैन काल तथा बौद्ध काल के समय से ही संगीत ने मानव जाति को समृद्ध किया है। उपनिषदों में भी संगीत से सम्बन्धित अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं, जो आज भी अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए हैं। भारतीय संगीत अपनी मधुरतामयी लय और भावपूर्ण अभिव्यक्ति के लिए जाना जाता है। संगीत भारतीय इतिहास के प्रारम्भ से ही हमारे सांस्कृतिक जीवन से जुड़ा हुआ रहा है। वैदिक काल में ही संगीत का स्पष्ट स्वरूप दिखाई देता है। हमारे चार वेदों में से सामवेद को विशेष रूप से संगीत का वेद कहा गया है। प्राचीन काल में ईश्वर की पूजा, अर्चना और भजनों में संगीत का प्रयोग किया जाता था। प्रारम्भ में यह हमारे इष्ट को प्रसन्न करने का एक साधन था, किन्तु कालान्तर में धार्मिक प्रवृत्तियों के विकास के साथ-साथ संगीत ने एक लौकिक स्वरूप भी ग्रहण कर लिया। "सर्वप्रथम भारतीय संगीतकार जिसे हम उस समय में महत्त्व प्रदान कर सकते हैं, जयदेव ने गीत गोविन्द लिखा और गाया। इसमें श्रीकृष्ण का वर्णन है। इस प्रकार वे भक्ति मार्गी गायक की श्रेणी में आते हैं। यद्यपि प्रत्येक गीत पर जयदेव द्वारा गाए गए राग तथा ताल का नाम लिखा है फिर भी यह आधुनिक भारतीय संगीतज्ञों की समझ से बाहर है। गीत गोविन्द एक आकर्षक संगीतमय रचना है।"[1]

जयदेव राजा लक्ष्मण सेन के दरबारी कवि थे। गीत गोविन्द की भाषा सरल होने के साथ-साथ सारगर्भित भी है। उनके गीत विभिन्न अवसरों पर गाए जाते थे। प्राचीन काल से ही रामायण, महाभारत, जैन काल तथा बौद्ध काल आदि में नृत्य और संगीत का व्यापक प्रचलन रहा है। "रामायण के अध्ययन से ज्ञात होता है कि नृत्य तथा संगीत बालिकाओं की शिक्षा का प्रमुख अंग था। रावण के दरबार की निवासिनी केवल सुन्दर ही नहीं थी बल्कि वे नृत्य तथा अन्य ललित कलाओं में प्रवीण होती थीं।"[2]

इस प्रकार रामायण में यह उल्लेख मिलता है कि संगीत और नृत्य की परम्परा रामायण काल से चली आ रही है। उस समय संगीत का प्रयोग मनोरंजन के उद्देश्य से भी किया जाता था। भारत में नाट्य-प्रदर्शन की परम्परा का प्रारम्भ श्रीकृष्ण और गोपिकाओं की रास-लीलाओं से माना जाता रहा है। "हरिवंश पुराण के अनुसार चित्रलेखा, उर्वशी, हेमा, रम्भा, मेनका, केशी और तिलोत्तमा आदि अप्सराओं के नृत्य की सूचना मिलती है। इससे प्रकट होता है कि सामान्य तथा राजकुलों की महिलाएँ नृत्य, गायन तथा वादन कला से परिचित हुआ करती थीं।"[3]

उस काल में भी संगीत का व्यापक विस्तार था, किन्तु उसमें सदैव शालीनता और उद्देश्यपरकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती थी। इसी प्रकार जैन धर्म में भी महावीर स्वामी के अहिंसा, परित्याग और शुद्धता जैसे सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार के लिए धर्म का सहारा लिया गया। जैन धर्म के अनुयायियों ने अधिकाधिक लोगों को इस ओर आकर्षित करने के लिए नृत्य और संगीत को अपनाया। इसी तरह बौद्ध काल को ललित कलाओं का उत्कर्ष काल माना जाता है। महात्मा गौतम बुद्ध के बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए संगीत और गायन के माध्यम से भारत तथा देश-विदेश में भी इसका सहारा लिया गया। इससे बौद्ध धर्म का व्यापक प्रसार हुआ और साथ ही संगीत कला की भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई। "अजन्ता, एलोरा की गुफाओं में हुई चित्रकारी उस समय की चित्र-नृत्यकारों की विविध मुद्राएँ बताती हैं कि बौद्ध युग में संगीत कला उन्नत अवस्था में थी।"[4]

समय का चक्र अत्यन्त तीव्र गति से आगे बढ़ता है। मनुष्य रामायण काल से लेकर वर्तमान समय तक अपने संगीत के माध्यम से ही विश्व में अपनी पहचान बनाए हुए है। अधिकांश लोग संगीत सुनकर अपने मानसिक तनाव को कम कर लेते हैं, इसलिए संगीत को एक प्रभावशाली मनोरंजन का साधन माना जाता है, जो आज भी उतना ही कारगर है। व्यावहारिक संगीत के क्षेत्र में सदा से ही एक ऐसा अल्पसंख्यक वर्ग रहा है, जिसके संगीतज्ञ असाधारण प्रतिभा के धनी होने के बावजूद संगीत-संसार के समक्ष अधिक प्रसिद्ध नहीं हो सके और जिनके विषय में लोगों को बहुत कम जानकारी प्राप्त हो सकी। ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। "तीस-पैंतीस वर्ष हुए, एक इस तरह के अज्ञात सरोद-वादक हुआ करते थे जिनका नाम 'चुन्नू खाँ' था और जिनका सरोद-वादन इतना सुरीला था कि अच्छे-अच्छे वादक उनको सुनकर अचंभे में पड़ जाते थे।"[5]

जाने ऐसे कितने ही 'चुन्नू खाँ' जैसे कलाकार गुमनामी की भेंट चढ़ गए, जिनमें ऐसी विलक्षण प्रतिभा थी, जो आज के अनेक प्रतिभाशाली व्यक्तियों में भी दिखाई नहीं देती। किसी को मंच प्राप्त नहीं हुआ, तो किसी को पारिवारिक सहयोग नहीं मिला, परिणामस्वरूप उनकी प्रतिभा चारदीवारी के भीतर ही दम तोड़ती रही। आज भी भारत में प्रतिभा की कोई कमी नहीं है, किन्तु परिस्थितियाँ अब भी लगभग वही बनी हुई हैं, अन्तर केवल इतना है कि अब इसमें राजनीति, भ्रष्टाचार और घूसखोरी की भूमिका बढ़ गई है। कुछ हद तक यदि किसी प्रकार का सहारा मिला है, तो वह टेलीविजन चैनलों के माध्यम से मिला है, जो रियलिटी शो का आयोजन कर रहे हैं। पुराणों और उपनिषदों में भी संगीत से सम्बन्धित प्रमाण उपलब्ध होते हैं। "संगीत के मनोरंजक उपकरण तीन प्राचीन उपनिषदों में उपलब्ध होते हैं छान्दोग्योपनिषद्, बृहदारण्यकोपनिषद् और तैत्तिरीयोपनिषद्। छान्दोग्योपनिषद् इन तीनों से अधिक प्राचीन है। डॉ० विंटरनिट्ज़ के मतानुसार छान्दोग्य और बृहदारण्यक अन्य कई प्राचीन छोटे–बड़े उपनिषदों के संकलन से बने थे, क्योंकि इन दोनों उपनिषदों की अनेक आख्यायिकाएँ एवं मौलिक अंश अन्य उपनिषदों में अक्षर मिलते हैं।"[6]

छान्दोग्योपनिषद् में गीत, वाद्य और नृत्य तीनों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इसका प्रमुख कारण यह था कि श्लोकों का पाठ छन्दों और स्वरों के माध्यम से किया जाता था। श्लोकों को स्वर-मिश्रित कण्ठ से गाने की सलाह दी जाती थी, जिससे स्वर मधुर हों और श्रोताओं को आकर्षित कर सकें। इसी कारण वाणी को लयबद्ध ढंग से गाने पर विशेष बल दिया जाता था। श्लोकों के माध्यम से वाणी को पहले मधुर बनाना तथा ईश्वर की आराधना के लिए उसे सर्वप्रिय मानना आवश्यक समझा जाता था। यह विश्वास किया जाता था कि मधुर वाणी से श्लोकों का उच्चारण करने से ईश्वर प्रसन्न होते हैं। यज्ञ में श्लोकों का अध्ययन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यह शिक्षा दी जाती थी कि यदि मधुर वाणी से श्लोकों का पाठ किया जाए, तो ईश्वर की कृपा प्राप्त होती है। प्राचीन काल में नायिका अपने नायक के प्रति क्रोध, प्रेम, ताना आदि भावों को व्यक्त करने के उद्देश्य से गीत गाया करती थी। उनका सम्बन्ध प्रत्यक्ष न होकर अप्रत्यक्ष होता था, किन्तु जिस नायक से वह प्रेम करती थी, वह यह समझ जाता था कि नायिका उसी के विषय में अपने भाव प्रकट कर रही है- "साहित्य, संगीत और सभी कलाओं में स्त्रियों का यह प्रभुत्व सर्वमान्य है। रागिणियाँ ही ज्यादा हैं। नायिकाएँ ही ज्यादा हैं और नायिकाओं के शब्द–चित्र प्रस्तुत करने वाली बन्दिशें ही ज्यादा हैं।"[7]

सिख सम्प्रदाय के धार्मिक ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहिब में भी शब्द–गायन का स्वरूप देखने को मिलता है। सिख धर्म में गायन को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया गया है। गायन के माध्यम से सिख धर्म में विभिन्न रागों और तालों का प्रयोग किया जाता है। "गुरुवाणी को गाने की परम्परा का विकास मध्यकाल से ही होना आरम्भ हो गया था। मध्यकाल में सिख धर्म का प्रचार–प्रसार बढ़ने के साथ ही तबला तथा पखावज का एक वर्ग विकसित हुआ, जो शब्द–कीर्तन किया करता था।"[8] आज भी गुरुद्वारों में शब्द–कीर्तन का विशेष महत्त्व है, जिसे श्रद्धा और आनन्द के साथ गाया जाता है।

निष्कर्ष

भारत की संस्कृति और कलाएँ, जिन्हें मध्यकाल में राजदरबारों का संरक्षण प्राप्त था, अंग्रेज़ी शासन के समय उपेक्षा का शिकार होने लगीं। अंग्रेज़ों का उद्देश्य भारतीय कला, संस्कृति और परम्पराओं को कमजोर करना था, जिसमें वे काफी हद तक सफल भी रहे। परिणामस्वरूप राजदरबारों में कला-संरक्षण की परम्परा का पतन होने लगा और संगीत कलाकारों को प्राप्त होने वाला संरक्षण धीरे-धीरे समाप्त होता गया। फिर भी अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद आधुनिक युग में अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना हुई। वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के इस दौर में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, आकाशवाणी और दूरदर्शन ने भारतीय संगीत के प्रचार–प्रसार में उल्लेखनीय योगदान दिया है। ध्वन्यांकन के वैज्ञानिक साधनों के माध्यम से संगीत की ऑडियो–वीडियो रिकॉर्डिंग सम्भव हुई है। मुद्रण तकनीक के विकास के कारण संगीत से सम्बन्धित पुस्तकें भी सस्ते दामों पर व्यापक रूप से उपलब्ध होने लगी हैं। इस प्रकार आधुनिक युग में संगीत के प्रत्येक क्षेत्र में निरन्तर प्रगति हो रही है। आकाशवाणी और दूरदर्शन के अतिरिक्त अनेक अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ भी भारतीय संगीत के संरक्षण और प्रचार–प्रसार के लिए सक्रिय रूप से कार्य कर रही हैं।

सन्दर्भ सूची

1. राम अवतार वीर – भारतीय संगीत का इतिहास, पृष्ठ 20
2. वही – पृष्ठ 88
3. डॉ० सुशील कुमार चौबे – हिन्दुस्तानी संगीत के रत्न, पृष्ठ 178
4. डॉ० अरुण कुमार सेन – भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृष्ठ 13
5. राम अवतार वीर – भारतीय संगीत का इतिहास, पृष्ठ 98
6. रेनू सचदेव – धार्मिक परम्पराएँ एवं हिन्दुस्तानी संगीत, पृष्ठ 31

7. डॉ० अरुण कुमार सेन – भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, पृष्ठ 162
8. राम अवतार वीर – भारतीय संगीत का इतिहास, पृष्ठ 100